ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2023; 9(1): 465-468
www.allresearchjournal.com
Received: 12-12-2022
Accepted: 10-01-2023

डॉ. विजय कुमार
प्राफेसर आर.सी.एस.कॉलेज
ल0 ना0 मि0 विश्वविद्यालय,
दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ. विजय कुमार
प्राफेसर आर.सी.एस.कॉलेज
ल0 ना0 मि0 विश्वविद्यालय,
दरभंगा, बिहार, भारत

भारती के साहित्य में मानवीय मूल्य

डॉ. विजय कुमार

सारांश
'गुनाहों का देवता' उपन्यास (1949) से प्रसिद्धि पाने वाले धर्मवीर भारती हिन्दी के सफल नाटककार, कहानीकार, आलोचक और कवि भी हैं। 'सूरज का सातवां घोड़ा' (1952) उनका दूसरा उपन्यास है। इसमें कथा कहने की जो शैली है वह तो निराली है ही उसका प्रतिपाद्य भी बड़ा महत्वपूर्ण और प्रासांगिक है। 'ग्यारह सपनों का देश' और 'प्रारंभ व समापन' उनके अन्य उपन्यास हैं।

मुर्दों का गाँव, स्वर्ग और पृथ्वी, चाँद और टूटे हुए लोग, बंद गली का आखिरी मकान, आदि उनके कहानी संग्रह हैं। धर्मवीर भारती नयी आन्दोलन के प्रमुख स्तंभ हैं और उनकी कहानियों में आधुनिकता झलकती है।

ठेले पर हिमालय, पश्यन्ती, कहनी–अकहनी, कुछ चेहरे कुछ चिन्तन, शब्दिता, मानव मूल्य और साहित्य उनके निबंध संग्रह हैं। 'मानव मूल्य और साहित्य' नामक निबंध संग्रह वैचारिकी से परिपूर्ण है और उनके साहित्य के मूल्यांकन और प्रासंगिकता के संदर्भ में यह विशेष रूप से उपयोगी है।

वे विचाराधारा से मार्क्सवादी थे और उन्होंने प्रगतिवाद : एक समीक्षा लिखकर प्रगतिवाद के प्रति अपने दृष्टिकोण को सुन्दर ढंग से स्पष्ट किया है।

ठंठा लोहा, सात गीत वर्ष, कनुप्रिया, सपना अभी भी, आद्यन्त और देशांतर उनके काव्य संग्रह हैं। भारती नयी कविता के प्रमुख स्तंभ हैं और इस हैसियत से वे अज्ञेय द्वारा संपादित 'दूसरा सप्तक' के प्रमुख कवि भी हैं। धर्मवीर भारती की प्रसिद्धि कारण उनका काव्य नाटक 'अंधायुग' है जो आधुनिक युग की बड़ी समस्या -युद्ध और मानव भविष्य पर केन्द्रित है।

धर्मवीर भारती एक मानवतावाद साहित्यकार हैं और उनके संपूर्ण चिन्तन के केन्द्र में मानव और उसका भविष्य है।

कूटशब्द : मानवीय मूल्य, सौन्दर्य–द्रष्टा, ज्ञान–विज्ञान, अंधायुग, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता

प्रस्तावना
सौन्दर्य–द्रष्टा धर्मवीर भारती हिन्दी के युगचेतस् कवि–कथाकार हैं। उनके साहित्य में आधुनिक मानव–अंतर्मन की दुश्चिताओं, कुंठाओं, ढ़हती आस्थाओं तथा उलक्षे हुए जीवन दर्शन पर मानवता के हित में व्यापक विमर्श हुआ है। भारती का समय वैचारिक संक्रमण का था, जिसमें ज्ञान–विज्ञान के आलोक में पुरानी मान्यताओं का क्षरण हो रहा था तथा नये मूल्यों की स्थापना हो रही थी। भारती ने स्वयं लिखा है कि ''इस संक्रान्ति काल में मानव की सदियों मान्यताएँ बहुत तेजी से ढ़हती चली जा रही है, उनकी चेतना के आगे नये–नये क्षितिज हर साल खुलते हैं।''[1] देश के अन्दर सन् 1942 का भारत छोड़ो आन्दोलन ने स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में पहली बार जन आन्दोलन का रूप लिया तथा द्वितीय विश्व युद्ध में उलझी हुई साम्राज्यवादी ताकतों की चूल हिलाकर रख दिया। विश्व युद्ध का अन्त भी व्यापक ध्वंश के साथ हुआ, हिरोशिमा और नागासाकी पर परमाणु बम गिराये गये। इस महाविनाशक घटना ने मानव अस्तित्व के सामने प्रश्न चिह्न खड़ा कर दिया। इस घटना ने भी युग चेतना को प्रभावित किया।

इसी युग में हमने नये मूल्यों की स्थापना की। स्वतंत्रता, तटस्थता, प्रजातंत्र, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता आदि मूल्यों के प्रति निष्ठावान राष्ट्र ने गाँधी के साथ–साथ गाँधीवादी मूल्यों को भी मरते देखा। त्याग की जगह स्वार्थ की राजनीति आरंभ हुई तथा साम्प्रदायिकता का भीषण रूप देश विभाजन के समय दिखा।

प्रबुद्ध मध्यवर्ग का उभार इस युग की बड़ी घटना है जिसकी पकड़ साहित्य के क्षेत्र से लेकर सचिवालय तक थी। इस बौद्धिक मध्यवर्ग ने हिन्दी साहित्य की दशा–दिशा बदल कर रख दी। इसके सदस्य व्यक्तिवाद और समाजवाद दोनों के एक साथ उपासक थे और संगठित होकर साहित्य के क्षेत्र में छायावाद की अपार्थिव कल्पनाओं और उलझे हुए जीवन दर्शन का विरोध करते हुए उद्दाम यौवन के माँसल गीत गाये इस घोषणा के साथ कि ''जिस नये आन्दोलन और नयी विचार धारा में मानवता की मुक्ति का क्षीण से क्षीण आलोक कण है, सच्चे, स्वस्थ और ईमानदार कलाकार की आत्मा उसे ग्रहण किये बिना चैन नहीं पाती।''[2] चाहे समाज उसे गुनाह ही समझे –

अगर मैंने किसी के होठ के पागल कभी चूमे,
अगर मैंने किसी के नैन के बादल कभी चूमे,
महज़ इस से किसी का प्यार मुझ पर शाप कैसे हो !
महज़ इस से किसी का स्वर्ग मुझ पर शाप कैसे हो ![3]

परन्तु, भारती केवल परम्परा तोड़ने मात्र के लिए परम्परा नहीं तोड़ता और न प्रयोग मात्र के लिए प्रयोग करता है। जब जिन्दगी, अनुभूति और विश्वास का तकाजा इतना तीखा हो जाता है कि वह बेचैन हो उठता है, तभी वह ऐसी कोई चीज लिखता है और अगर उसे पता चलता है कि ऐसी चीज में 'हुंकार' नहीं है तो वह उसे फाड़ कर फेंक देता है।[4] 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' एक ऐसा ही प्रयोग है। जिसमें एक कहानी में अनेक कहानियाँ तो है पर अनेक कहानियों में एक ही कहानी की ओर पाठक का ध्यान खींचना उद्देश्य है। कहानी अनोखे अंदाज में कही गयी और आरंभ में उसका विषय प्रेम पर केन्द्रित लगता है। क्योंकि कथा नायक माणिक मुल्ला मध्यवर्गीय चरित्र के हिसाब से कहानी कहने जा रहे हैं और उनका मानना है कि राजनीति और प्रेम – इन दो विषयों के अतिरिक्त मध्यवर्ग में वार्त्ता का कोई विषय नहीं होता और इसीलिए उनकी धारणा थी कि ''कहानियों की तमाम नस्लों में प्रेम कहानियाँ ही सबसे सफल साबित होती है। अतः कहानियों में रोमांस का अंश जरूर होना चाहिए।''[5] किन्तु साथ ही यह भी कहते हैं कि ''जो प्रेम समाज की प्रगति और व्यक्ति के विकास का सहायक नहीं बन सकता वह निरर्थक है।''[6] और अनुभूति का तकाजा तीखा हो जाता है तो अपनी बात से पलट जाते हैं। माणिक मुल्ला कहते हैं कि ''ये कहानियाँ वास्तव में प्रेम नहीं वरन् उस जिन्दगी का चित्रण करती है जिसे आज का निम्न–मध्यवर्ग जी रहा है। उसमें प्रेम से कहीं ज्यादा महत्त्वपूर्ण हो गया है आज का आर्थिक संघर्ष, नैतिक विश्रृंखलता, इसीलिए इतना अनाचार, निराशा, कटुता और अँधेरा मध्यवर्ग पर छा गया है। पर कोई न कोई ऐसी चीज है जिसने हमें हमेशा अँधेरा चीड़कर आगे बढ़ने, समाज व्यवस्था को बदलने और मानवता के सहज मूल्यों को पुनः स्थापित करने की ताकत और प्रेरणा दी है। चाहे उसे आत्मा कह लो चाहे कुछ और। और विश्वास, साहस, सत्य के प्रति निष्ठा उस प्रकाशवाही आत्मा को उसी तरह आगे ले चलते हैं जैसे सात घोड़े सूर्य को आगे बढ़ा ले चलते हैं।''[7] वर्त्तमान की दुर्दशा पर चिंता करना और भविष्य के प्रति आशावान् होना, भविष्य के घोड़े (सूरज का सातवाँ घोड़ा) पर भरोसा रखना धर्मवीर भारती के सकारात्मक चिंतन को दर्शाता है। इसी सकारात्मक चिंतन का प्रतिफल 'अंधा युग' है। 'अंधा युग' में भी भारती आस्था–अनास्था जैसे प्रश्नों से जूझते हैं। युयुत्सु की अनास्था कहीं न कहीं विखंडित हो रहे मूल्यों से ही उपजती है। वह अब श्रीकृष्ण को प्रभु नहीं मानता है तथा 'आस्था' शब्द को ही नकली और खोटा कहता है –

आस्था नामक यह घिसा हुआ सिक्का
अब मिला अश्वत्थामा को
जिसे नकली और खोटा समझ मैं
कूड़े पर फेक चुका हूँ वर्षों पहले।

युयुत्सु की इस अनास्था के पीछे युगबोध–स्वातंत्र्योत्तर भारत का युग बोध है जिसकी अभिव्यक्ति छायावादोत्तर साहित्य में बड़े पैमाने पर हुई है। यह भारतीय इतिहास की अप्रत्याशित घटना थी कि एक नवोदित राष्ट्र एका–एक स्थापित मूल्यों से प्रस्थान कैसे कर गया। धर्मवीर भारती कहते हैं कि ''अभी–अभी हमने राष्ट्रीय जीवन का एक दौर देखा है, वह त्याग, तपस्या, निष्ठा, आत्मदान, सेवा, सत्य पर आग्रह, विराट के आत्मसात् और – यदि तुम्हारी पुकार पर कोई नहीं आता तब एकला चलो रे– की जाज्वल्यमान परम्परा अकस्मात इस रिक्तता, हासोन्मुखता, निर्वीर्यता, पलायन, दिग्भ्रम और करूणोत्पादक विवेकहीनता में कैसे बदल गयी यह सहसा समझ में नहीं आता। ..... इस विघटन का आधार बिन्दु वह था जहाँ संघर्ष की जल्दबाजी में जन के सहज यथार्थ बोध को विकसित न कर हम नायक पूजा में लग गये थे। सत्याग्रह युग की इस नायक पूजा की प्रवृत्ति और उससे उद्भूत छायावादी और प्रगतिवादी हीरो तथा नये साहित्य में हीरो के निर्वासन का संकेत कई लेखकों ने किया है.... ..... अपने राष्ट्रीय पुनुरूत्थान की सही सांस्कृतिक भूमिका तो वह होती कि भारत का प्रत्येक नागरिक सजग होता, विवेक युक्त होता, आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक कुण्ठाओं से मुक्त होकर वह स्वतः सही मूल्यों की खोज करता और उस ओर अग्रसर होता, पर यह एक लम्बा दुस्साध्य रास्ता था।''[8] आधुनिक युग विविध दार्शनिक मत वादों से आलोकित है। मार्क्सवाद, अस्तित्ववाद, फ्रायडवाद आदि पश्चिमी दार्शनिक मतों से विश्व साहित्य प्रभावित है। आस्तित्वादी नीत्से ने विज्ञान की प्रगति तथा धर्म निरपेक्ष विश्व में इसाईयत के अस्तित्व पर ही प्रश्न चिह्न नहीं उठाया बल्कि ईश्वर की मृत्यु तक की घोषणा कर दी – ''गॉड इज डेड'' इस कथन ने विश्व भर में खलबली मजा दी। नीत्से की इस घोषणा का प्रभाव भारतीयों के लिए दुहरा था। गाँधीजी की मृत्यु से संकट गहरा गया। महात्मा गाँधी एक नेता ही नहीं थे, वे देवदूत थे, महामानव थे। महामानव की मृत्यु में ईश्वर की मृत्यु दीखना स्वाभाविक ही था। नई कविता के दौर में लघुमानव या लघुमानववाद की चर्चा के मूल में महामानव का चला भी था। 'अंधायुग' में यह चिन्ता व्यक्त की गयी है, प्रकारान्तर से। युयुत्सु कहता है –

इसीलिए साहस से कहता हूँ,
नियति है हमारी बँधी प्रभु के मरण से नहीं
मानव भविष्य से।
परीक्षित के जीवन से !
कैसे बचेगा वह ?

कोई आस्थावान् शेष नहीं है,
उत्तर देने को ?

युयुत्सु आस्थावान् को जो चुनौती देता है वह अनायास नहीं है। नीत्से 'आस्था' को सत्य को न मानने की इच्छा का पर्याय मानता था। ईश्वर की मृत्यु की घोषणा कर नीत्से ने मानव को उच्छृंखल नहीं अपितु उत्तरदायित्व पूर्ण बनने का भी संदेश दिया। सृजन और निर्माण का दायित्व लघुमानव को लेना पड़ेगा। धर्मवीर भारती ने भी जे0 बी0 कोट्स द्वारा लिखित पुस्तक 'द क्राइसिस ऑफ ह्यूमन परसन' से इसी तथ्य को उद्धरित किया है –

वैयक्तिक स्वतंत्रता की इस अदम घोषणा का अर्थ अराजकता, उच्छृंखलता, निरंकुशता और दायित्वहीनता नहीं है। उसके साथ एक दायित्व भी है – मूल्यों की खोज, उसकी मानवतावादी सामाजिक व्याख्या और आचरण में इसकी सक्रिय परिणति।[9] भारती की कविता 'टूटा पहिया' यही संदेश देती है। और 'अंधा युग' में 'प्रभु का संदेश' में लघुमानव की क्षमता, उसकी संभावनाओं को आश्वस्त करती है –

बोले अवसान के क्षणों में प्रभु –
''मरण नहीं है ओ व्याध !
मात्र रूपांतरण है यह
सबका दायित्व लिया मैंने अपने ऊपर
अपना दायित्व सबको सौंप जाता हूँ मैं सबको
अब तक मानव भविष्य को मैं जिलाता था

मेरा दायित्व वह स्थित रहेगा
हर मानव–मन के उस वृत्त में
जिसके सहारे वह
सभी परिस्थितियों का अतिक्रमण करते हुए
नूतन निर्माण करेगा पिछले ध्वंसों पर !

यह आश्वासन्, यह नई आस्था वस्तुतः मानवीय मूल्यों के प्रति है। भारती के अनुसार, ''मानवीय मूल्य के प्रति प्रत्येक शिविर और प्रत्येक धारा में उभरकर आनेवाली यह आस्था हमारी उस प्राथमिक स्थापना को सिद्ध करती है कि इस संकट में भी मनुष्य हारा नहीं है, बल्कि उसने इसका प्रत्युत्तर दिया है और दिनों दिन उसने और भी सशक्त स्वरों में घोषित किया है कि वह प्रगति का सूत्र है और इतिहास का निर्माता है।[10]

मानव भविष्य की चिन्ता विध्वंशक युद्ध को लेकर भी है जिसका परिणाम मानव जाति भोगता आ रहा है। द्वितीय विश्व युद्ध ने विध्वंशकता में पूर्ववर्ती सभी युद्धों को पीछे छोड़ दिया है। उस युद्ध की आग अब तक जल रही है। नाटो के देश रूस के विरूद्ध आज भी परोक्ष रूप से यूक्रेन में लड़ रहे हैं। वर्षों तक दो–ध्रुवीय दीखने वाला विश्व बदल चुका है। छोटे देश भी परमाणु सम्पन्न हो चुके हैं और परमाणु युद्ध का खतरा सतत् बना हुआ है। लगता है मानव जाति को युद्ध से कभी मुक्ति नहीं मिलेगी। बाबा साहब भीमराव अम्बेदकर ने एक स्थान पर सन्त एगॅस्टाइन के इतिहास दर्शन का उल्लेख किया है, जिसमें कहा गया है कि इतिहास ईश्वर की गुप्त योजना का व्यक्त रूप है जिसमें मानव जाति को युद्ध और पीड़ा से गुजरते रहना है कयामत तक (We have had the Augustinian theory of history, according to which history is only an unfolding of a divine plan in which mankind is to continue through war and suffering until that divine plan is completed at the day of judgement)[11].

'युद्ध और शांति'' को विषय बनाकर विश्व में अनेक कालजयी साहित्य की रचना हुई, जिसमें 'महाभारत' सर्वोत्तम है। यह आधुनिक भारतीय साहित्य का सर्वश्रेष्ठ उपजीव्य है। हिन्दी में दिनकरजी ने 'महाभारत' के प्रसंगों के आधार पर श्रेष्ठ काव्यों की रचना की है। 'कुरूक्षेत्र' में युद्ध के ध्वंश पर पाश्चाताप् में जलते पाण्डवों की मनः स्थिति का कारूणिक चित्रण किया गया है तथापि काव्य का समापन प्रश्नवाचक चिह्न के साथ होता है –

पापी कौन ? मनुज से उसका न्याय चुरानेवाला ?
या कि न्याय खोजते विघ्न का सीस उड़ानेवाला ?

निश्चित रूप से इस उक्ति ने स्वाधीनता संग्राम के यज्ञ में समिधा का काम किया होगा। परन्तु भारती ने उन्हीं प्रसंगों के आधार पर युद्धोन्माद के बीच मानव भविष्य की चिंता की है, क्योंकि दोनों तरफ भयानक अस्त्र–शस्त्रों का प्रयोग हो रहा है। व्यास ब्रह्मास्त्र के प्रयोग पर अश्वत्थामा को चेतावनी देते हुए कहते हैं –

ज्ञात क्या तुम्हें है परिणाम इस ब्रह्मास्त्र का ?
यदि यह लक्ष्य सिद्ध हुआ तो नरपशु !
तो आगे आने वाली सदियों तक

सूरज बुझ जायेगा।
धरा बंजर हो जायेगी।

द्वितीय विश्व युद्ध में प्रयुक्त परमाणु बम की विनाशक क्षमता के आलोक में धर्मवीर भारती ब्रह्मास्त्र की विनाशक क्षमता का वर्णन कर रहे हैं। आज जब रूस–यूक्रेन युद्ध के समाप्त होने की उम्मीद नहीं दिखती है तो परमाणु युद्ध का संकट गहराता दिखता है।

धर्मवीर भारती ने अपने जीवन काल में देश–विदेश की अनेक ऐतिहासिक घटनाओं को करीब से देखा। देश के भीतर स्वाधीनता संग्राम से लेकर आपातकाल के दौरान सत्ता के दमन चक्र को देखा तो बंगला देश की धरती पर तानाशाह के क्रूरतम कृत्य को। भ्रष्टाचार, बेरोजगारी तथा सरकार की दमनकारी नीतियों के खिलाफ लोकनायक जयप्रकाश के नेतृत्व में, सन् 1974 में चलाया गया संपूर्ण क्रांति आन्दोलन स्वतंत्र भारत का सबसे बड़ा और परिवर्त्तनकारी आन्दोलन था। इस आन्दोलन से धबरायी श्रीमती इंदिरा गाँधी की सरकार ने 25 जून 1975 को आपातकाल की घोषणा कर दी तथा मीसा कानून का दुरूपयोग करते हुए आन्दोलनकारियों तथा नेताओं को नजरबंद कर दिया। आन्दोलन के दौरान सन् 1974 में आन्दोलनकारियों पर लाठियाँ बरसायी गई, जिसमें जय प्रकाश नारायण भी बुड़ी तरह घायल हो गये। भारती के लिए यह घटना आहत कर देने वाला था। उन्होंने 'मुनादी' कविता लिखकर आन्दोलन के प्रति अपनी पक्षधरता स्पष्ट कर दी। सत्ता के साहित्यिक प्रतिरोध की कविताओं में यह कविता 'मुनादी' अपनी भाव–शैली अपने टेकनीक तथा प्रभाव की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है –

खलक खुदा का, मुलुक बारशाका
हुकुम शहर कोतवाल का .....
हर खासो आम को आगाह किया जाता है
कि खबरदार रहें .....
क्योंकि
एक बहत्तर बरस का बूढ़ा आदमी
अपनी काँपती कमजोर आवाज में
सड़कों पर सच बोलता हुआ निकल पड़ा है

लाखों की तादाद में शामिल हो उस जुलूस में
और सड़क पर पैर घिसते हुए चलो
ताकि वह खून जो इस बूढ़े की वजह से
बहा, वह पुछ जाए।

संकटग्रस्त समय में, सामाजिक, राजनैतिक परिवर्त्तन की नितांतता की कड़ी में देश के साहित्यकार की तटस्थता कहाँ तक उचित है ? दिनकर ने स्पष्ट किया– ''समर शेष है, नहीं पाप का भागी केवल व्याघ, तटस्थ है, समय लिखेगा उनके भी अपराध।'' धर्मवीर भारती ने उनके पूर्व ही मिथक के माध्यम से तटस्थ साहित्यकारों की कर्त्तव्यहीनता पर व्यंग किया था– ''कैसा लगेगा तुम्हें/जब तुम यह जानोगे/कि यह तो लिखाया था मैंने ही सुबह–शाम जा–जाकर/दुःख की गाथा गाकर/पावों पड़–पड़ बूढ़े व्यास के/ असल में हुआ यह था/मेरे चारो भाई जूझते अकेले रहे/मैं तो किनारे खड़ा हर आने वाले से/घबराकर

कहता था – इधर मत आ/इधर मत–इधर मत आना जी तुम/इधर हम तटस्थ हैं।'' (बृहन्नला कविता)। यह तटस्थ बुद्धिजीवी ही क्रांति की राह में बड़ी बाधा है। इसकी चुप्पी से अधिनायकवाद पनपता है। नई कविता के दौर में पनप रही इस प्रवृत्ति पर कवियों ने गहरी चिंता व्यक्त की। मुक्ति बोध ने अपनी 'भूल गलती' कविता में जिस बादशाह के शाही मुकाम और आतंक का वर्णन किया है उसके दरबारियों में शाइर, सूफ़ी, अलगजाली, इब्ने सिन्ना, अलबरूनी, आलिमों फाजिल, सिपहसालार सब हैं, मगर चुप। घायल ईमान को जंजीरों में जकड़ दरबार में लाया जाता है आत्म समर्पण के लिए। परन्तु, इस अन्याय का कोई प्रतिरोध नहीं करता। पर इसी भीड़ में से कोई भाग निकलता है और कथावाक उसके संबंध में कहता है –

हमारी हार का बदला चुकाने आयेगा
संकल्प–धर्मा चेतना का रक्तप्लावित स्वर
हमारे ही हृदय का गुप्त स्वर्णाक्षर
प्रकट होकर विकट हो जाएगा।

जनता की चुप्पी, बुद्धिजीवियों की तटस्थता के कारण क्रान्ति नायक को जो पीड़ा भुगतनी पड़ती है उसका मिथकीय चित्र धर्मवीर भारती ने 'प्रमथ्यु गााथा' शीर्षक कविता में किया है। 'भूल गलती' और 'प्रमथ्यु' कविता का कथ्य एक है। शहंशाह की जगह ग्रीक पुराण का पात्र द्युतिपर है जो कहता है – ''मैंने जो नक्शा बनाया था/मानव अस्तित्व का – उसमें थी दासता/विनय थी, कायरता थी/ भय था, आतंक था/ अंधेरा था/यह जो/इस व्यक्ति ने/अँधेरे को देकर चुनौती/दुस्साहस किया/यह मेरी सत्ता का प्रथम अनादर था।'' यह व्यक्ति और कोई नहीं काव्य नायक प्रमथ्यु है जो द्युतिपर के घर कैद अग्नि को पृथ्वी पर लाकर अंधेरा दूर करता है। द्युतिपर सजा के तौर पर उसे जंजीरों में जकड़ पहाड़ पर डाल देता है जहाँ एक बूढ़ा गिद्ध उसके कंधे पर बैठ उसके माँस को नोचता है और फिर अगले दिन घाव भर जाता है। यह क्रम जारी रहता है। जिस जनता के लिए वह अग्नि चुराकर लाता है वह प्रमथ्यु की सजा का तमाशबीन मात्र है – ''यह है करिश्मा और/हम सब करिश्मों के प्यासे हैं/चाहता अगर तो हममें से हर एक व्यक्ति/अपने ही साहस से प्रमथ्यु हो सकता था लेकिन हम डरते थे/ज्योति चाहते थे/पर दण्ड भोगने से डरते थे .....। हम खुद क्यों भोगें कोई भी दण्ड ?'' परन्तु प्रमथ्यु प्रत्येक जन के भीतर मूर्च्छित प्रमथ्यु को स्पष्ट देखता है और आशा करता है कि अवसर पाकर वह होश में आएगा, जाग जाएगा–अन्याय के विरूद्ध खड़ा हो पायेगा।

धर्मवीर भारती के साहित्य और चिन्तन में मानव–मूल्य एवं मानव–भविष्य की रक्षा का भाव प्रमुखता से उभरकर सामने आया है और यही उन्हें अपने समकालीन साहित्यकारों में विशिष्ट और प्रासंगिक बनाते हैं। 'अंधा युग' में गर्भस्थ शिशु परीक्षित की चिन्ता समग्र मानव जाति के भविष्य की चिन्ता से जुड़ी हुई है। जनपक्षधरता उनके साहित्य को सार्थकता प्रदान करती है। 'टूटा पहिया' के साथ वे लघु मानव तथा उपेक्षित मानव के पक्ष में खड़े हैं। सत्ता के प्रतिरोध का भाव भी उनके चिन्तन में दिखता है। सत्ता परिवर्त्तन के प्रति आम जनता की तटस्थता से वे दुःखी हैं। अपनी इस पीड़ा को उन्होंने 'प्रमथ्यु गाथा' शीर्षक कविता के सहारे व्यक्त किया है। मार्क्सवाद में विश्वास रखते हुए भी वे उस आत्मा की सत्ता को स्वीकारते हैं, जो विकट परिस्थिति में भी आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। इसी आत्मा के बल पर वे सूरज के सातवें घोड़े को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं।

संदर्भ

1. दूसरा सप्तक, पृष्ठ–160, संपादक– अज्ञेय, प्रकाशक– भारतीय ज्ञान पीठ, नयी दिल्ली–110003, तीसरा संस्करण– 2009
2. वही, पृष्ठ–161
3. वही, पृष्ठ–166
4. वही, पृष्ठ–166
5. सूरज का सातवाँ घोड़ा, धर्मवीर भारती, पृ0–15, प्रकाशक– भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण– 2012, नयी दिल्ली–110003
6. वही, पृष्ठ–78
7. वही, पृष्ठ–79
8. मानव मूल्य और साहित्य, लेखक – डॉ0 धर्मवीर भारती, प्रकाशक – भारतीय ज्ञानपीठ, पृष्ठ–55, 56
9. मानव मूल्य और साहित्य, निबंध– नयी मर्यादा का उदय, लेखक–धर्मवीर भारती, प्रकाशक–भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली–110003, पृष्ठ–88
10. नयी मर्यादा का उदय, पुस्तक–मानव मूल्य और साहित्य, लेखक – डॉ0 धर्मवीर भारती, भारतीय ज्ञान पीठ, संस्करण– 2019, पृष्ठ–93
11. Ranade, Gandhi and Sinnah, Dr. B.R. Ambedkar, Gyan Publishing House, New Delhi-110002; p. 13.